7

ब्रिटिश शासन के विरुद्ध लोकप्रिय जन प्रतिरोध

अंग्रेजी औपनिवेशिक शासन का भारतीय समाज के सभी वर्गों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि कुछ अजनबियों द्वारा अनेक वर्षों तक हमारे ऊपर शासन किया जाए? नहीं बिलकुल नहीं। हममें से अधिकांश का जन्म 1947 के बाद हुआ, जबकि भारत पहले ही स्वाधीनता प्राप्त कर चुका था। क्या आप जानते हैं कि अंग्रेजों ने भारत पर कब विजय प्राप्त की और इसकी अर्थव्यवस्था को औपनिवेशिक नियंत्रण में ले लिया जिसके लिए उन्हें लोगों के कड़े विरोध का सामना करना पड़ा। इन विरोधों का एक लंबा तांता सा लग गया। इन विरोधों का नेतृत्व जीते गए भारतीय राज्यों के अपदस्थ शासकों, पूर्व कर्मचारियों और दरिद्र बना दिए गए ज़मीदारों और पोलिगरों द्वारा किया गया। इन विद्रोहों ने विभिन्न नस्लों, धर्मों और सामाजिक पृष्ठभूमि के सभी वर्गों को अंग्रेजी शासन के विरूद्ध एकजुट कर दिया। इस पाठ में हम कुछ महत्वपूर्ण लोकप्रिय विद्रोहों, उनकी प्रकृति और उनके अभिप्राय के संबंध में पढ़ेंगे। हम 1857 के विद्रोह के संबंध में भी पढ़ेंगे जिसका हमारे राष्ट्रीय आंदोलन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा था।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़ने के बाद आप :

- 1857 से पूर्व औपनिवेशीय शासन के विरूद्ध लोकप्रिय प्रतिरोधी आंदोलनों के संबंध में चर्चा कर सकेंगे।
- किसानों और जनजातियों के विरोध की प्रकृति और उसकी सार्थकता की व्याख्या कर सकेंगे।
- ऐसे मुद्दों की पहचान कर सकेंगे जिनके परिणामस्वरूप 1857 का विद्रोह भड़का।
- 1857 के विद्रोह के महत्व और उसके अभिप्राय का विश्लेषण कर सकेंगे।

7.1 अंग्रेजी शासन के विरूद्ध प्रारंभिक प्रतिरोध आंदोलन (1750-1857)

क्या आप किसी ऐसे कारण के संबंध में सोच सकते हैं जिसकी वजह से इन विद्रोही आंदोलनों को लोकप्रिय कहा जाता है? क्या इसका कारण उन लोगों की बहुत बड़ी संख्या हैं जिन्होंने इनमें

भाग लिया? अथवा यह कि इन आंदोलनों को मिली अपार सफलता? इस खंड को पढ़ने के बाद आप किसी निर्णय तक पहुंचने के योग्य होंगे।

7.1.1 जनविद्रोह व प्रतिरोध के कारण

लोग विरोध क्यों करते हैं? वे तभी विरोध करते हैं जब उन्हें अनुभव होता है कि उनके अधिकार छीने जा रहे हैं। इसका तात्पर्य यह है कि सभी प्रतिरोधी आंदोलन किसी न किसी प्रकार के शोषण के विरूद्ध प्रारंभ हुए। अंग्रेजी शासन, जिसकी नीतियों ने भारतीयों के अधिकारों, प्रतिष्ठा और आर्थिक स्थिति की अवमानना की वे सभी इसी शोषण का प्रतीक थीं।

विरोध और प्रतिरोध मुख्यतः अपदस्थ शासक वर्गों, किसानों और जनजातियों द्वारा किया गया था। उदाहरणतया जब वारेन हेस्टिंग्स् के बनारस पर आक्रमण किया और धन और सेना की अपनी अन्यायपूर्ण मांग पूरी करने के लिए राजा चेत सिंह को कारागार में डाला तो बनारस के लोगों ने विरोध किया। मद्रास प्रेसीडेंसी में जब अंग्रेजों ने सामंतों (पॉलिगरस) के सैनिक और भूमि अधिकारों को छीनने का प्रयास किया तो उन्होंने अंग्रेजों का विरोध किया। धार्मिक रीति-रिवाजों में हस्तक्षेप इन लोकप्रिय प्रतिरोधों का एक और कारण था। यह बगावतें प्रायः ईसाई विरोधी होती थीं। इसका कारण था अंग्रेजों द्वारा प्रारंभ किए गए सामाजिक-धार्मिक सुधार, जो लोगों को स्वीकार नहीं थे।

कुछ अन्य विद्रोहों में शासक और शोषित वर्गों के धर्म में भिन्नता भी प्रतिरोध का तात्कालिक कारण बनी। मालाबार क्षेत्र के मैप्पिला विरोध में ऐसा ही हुआ था। यहाँ पर मुसलमान किसानों ने हिन्दु जमीदारों और साहूकारों के विरूद्ध लड़ाइयाँ कीं। अगले खंड में हम इस आंदोलन की प्रकृति के संबंध में पढ़ेंगे।

7.1.2 जनविद्रोह व प्रतिरोध की प्रकृति

अपना विरोध प्रकट करने के लिए विद्रोहियों द्वारा दमनकारियों के प्रतिरोध में हिंसा और लूटपाट जैसे हथियारों का प्रयोग किया जाता था। निम्न और शोषित वर्ग प्रायः अपने शोषकों पर आक्रमण करते थे। यह शोषक थे अंग्रेज़ या जमींदार अथवा लगान एकत्र करने वाले अधिकारी, धनी व्यक्तियों के समूह और व्यक्ति। संथाल विद्रोह में बहुत बड़े स्तर पर हिंसा देखने में आई जहाँ सूदखोरों के बही-खातों और सरकारी भवनों को जला दिया गया और शोषकों को दण्ड दिया गया।

पिछले पाठ में हमने अंग्रेजों की भूमि संबंधी नीतियों के संबंध में पढ़ा। इनका उद्देश्य था किसानों और जनजातिय लोगों से यथासंभव अधिक से अधिक धन निकलवाना। इसने किसानों और जनजातियों में इतना असंतोष भर दिया कि उन्होंने अंग्रेजों के विरूद्ध अपना क्रोध प्रदर्शित करना शुरू कर दिया। यह जानना बहुत महत्वपूर्ण है कि इन लोकप्रिय विद्रोही आंदोलनों का उद्देश्य था पुरानी संरचनाओं और संबंधों का पुनरुत्थान करना जिन्हें अंग्रेजों ने नष्ट कर दिया था। प्रत्येक सामाजिक वर्ग के पास औपनिवेशिक शक्तियों के विरूद्ध आवाज़ उठाने के अपने निजी कारण थे। उदाहरणतया पदच्युत जमींदार और शासक अपनी ज़मीन और संपदाएँ पुनः प्राप्त करना चाहते

थे। इसी प्रकार, जनजातीय समूहों ने इसलिए विद्रोह किया कि वे नहीं चाहते थे कि व्यापारी और सूदखोर उनके जीवन में हस्तक्षेप करें।

7.2 19वीं शताब्दी में किसानों और जनजातियों के विद्रोह

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि 1760 की कालावधि से शुरू करें तो सन्यासी विद्रोह और बंगाल और बिहार में मछुआरों के विद्रोह तक शायद ही कोई वर्ष होगा जिसमें कोई सैनिक विद्रोह नहीं हुआ। 1763 से 1856 तक छोटे-छोटे विद्रोहों को छोड़कर 40 मुख्य विद्रोह हुए। तथापि, यह सभी विद्रोह विशिष्टताओं और प्रभाव की दृष्टि से स्थानीय ही थे। वे सभी परस्पर भिन्न प्रकृति के थे क्योंकि प्रत्येक विद्रोह का भिन्न लक्ष्य था। इस पाठ के अगले खंड में हम इन आंदोलनों के संबंध में अधिक विस्तार से पढ़ेंगे।

चित्र 7.1 भारत का मानचित्रः 19वीं शताब्दी में किसानों और जनजातियों के विद्रोह से संबंध विविध स्थल

7.2.1 किसान विद्रोह

पिछले पाठ में आपने विविध भू-व्यवस्थाओं और उनके भारतीय किसानों पर पड़े प्रतिकूल प्रभावों के संबंध में पढ़ा। स्थाई व्यवस्था (पर्मानेन्ट सैटलमेंट) ने ज़मीदारों को भूमि का स्वामी बना दिया था, परंतु यदि वे समय पर लगान अदा करने में असफल रहें तो उनकी ज़मीन को बेचा जा सकता था। इसने ज़मीदारों और भू-स्वामियों को किसानों से धन छीनने के लिए मजबूर कर दिया, चाहे उनकी सारी फसल नष्ट हो गई हो। यह किसान प्रायः ऋणदाताओं से ऋण लेते थे जिन्हें महाजन भी कहा जाता था। वे दरिद्र किसान उनसे लिए गए ऋण को कभी भी लौटा नहीं पाते थे। इसके कारण उन्हें घोर दरिद्रता जैसे कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था और उन्हें बंधुआ मजूदरों की तरह काम करने के लिए बाध्य किया जाता था। अतः निम्न एवं शोषित वर्ग के लोग अपने शोषकों पर प्रायः आक्रमण करते रहते थे। ज़मीदारों द्वारा लगान का भुगतान न करने का तात्पर्य यह भी था कि अंग्रेजों द्वारा उनकी ज़मीन को छीन लिया जाएगा। तत्पश्चात् इस जमीन को ऊँची कीमत अदा करने वाले बोलीदाता को नीलामी में बेच दिया जाता था, जोकि प्रायः शहरी क्षेत्रों के निवासी होते थे। शहरों से आने वाले नये ज़मीदारों की ज़मीन में बहुत कम अथवा बिलकुल भी रूचि नहीं होती थी। वे ज़मीन की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने के लिए बीजों या खाद में धन का निवेश नहीं करते थे परंतु उनकी रूचि अधिक से अधिक लगान वसूली, जितनी ज्यादा से ज्यादा वे कर सकते थे, में रहती थी। यह किसानों के लिए विनाशकारी प्रमाणित हुआ, जिससे वे बहुत पिछड़े और निष्क्रिय हो गये।

इस स्थिति से बाहर आने के लिए किसानों ने अब नील, गन्ना, पटसन (जूट), कपास, अफीम और इसी प्रकार की व्यापारिक फसलों की उपज शुरू कर दी। यहीं से खेती (कृषि) का वाणिज्यीकरण प्रारंभ हुआ। फसल की अवधि के दौरान किसान अब अपनी फसल/उत्पाद को बेचने के लिए थोक व्यापारियों, सौदागरों और दलालों पर निर्भर हो गए। जैसे ही वे व्यापारिक फसल की ओर मुड़े खाद्यान्नों का उत्पादन कम हो गया। खाद्यान्नों की कमी से अकाल पड़ गया। अतः इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि भूखे किसानों ने विद्रोह कर दिया। अंग्रेजी नीतियों के परिणामस्वरूप हुए किसान विद्रोहों के संबंध में आइए कुछ विस्तार से पढ़ते हैं।

1. फकीर और सन्यासी विद्रोह (1770 - 1820): 1757 के पश्चात बंगाल पर अंग्रेजों के नियंत्रण की स्थापना के उपरांत भू-लगान की वसूली और किसानों पर शोषण में बढ़ोतरी हो गई। 1770 के बंगाल में पड़े अकाल ने उन किसानों को जिनकी ज़मीनों पर कब्जा कर लिया गया था, अपदस्थ जमींदारों, सेना से निकाले गये सैनिकों और गरीबों को मिलकर विद्रोह करने के लिए मार्ग दिखाया। सन्यासी और फकीर भी इनके साथ जुड़ गए थे।

   फकीर बंगाल में घुमन्तु धार्मिक मुसलमान भिक्षुकों के समूह थे। दो प्रसिद्ध हिन्दु नेता जिन्होंने इनका समर्थन किया वे थे भवानी पाठक और एक महिला देवी चौधरानी। इन्होंने अंग्रेजों के कारखानों पर धावा बोल दिया और उनका सामान, नकदी, शस्त्र और बारूद छीन लिए। मजनूं शाह इनके प्रमुख नेताओं में से एक थे। अन्ततः 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में इन विद्रोहों को नियंत्रित किया जा सकता।

   सन्यासी विद्रोहों की घटनाएँ बंगाल में 1770 से 1820 के बीच के वर्षों में हुई। 1770 के भीषण अकाल के बाद बंगाल में सन्यासियों के विद्रोह उभरे जिनके कारण अत्यंत अव्यवस्था और गरीबी फैल गई। तथापि, विद्रोह का तात्कालिक कारण था हिन्दुओं और मुसलमानों

दोनों में से तीर्थस्थलों का जाने वाले तीर्थयात्रियों पर अंग्रेजी सरकार द्वारा लगाये जाने वाले प्रतिबंध।

2. नील विद्रोह (1859-1862): अंग्रेजों ने अनेक ऐसे उपायों को अपनाया जिनसे उनके लाभों में वृद्धि हो सकती थी। उन्होंने लोगों के जीवन-यापन के बुनियादी साधनों में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया। उन्होंने न केवल नई फसलों की शुरुआत की बल्कि खेतीबाड़ी की नई तकनीकें भी शुरू कर दी। किसानों और जमींदारों पर भारी कर अदा किए जाने और वाणिज्यिक फसलें उगाने के लिए गहरा दबाव डालना शुरू कर दिया। ऐसी ही एक वाणिज्यिक फसल थी नील की खेती। नील की खेती का निर्धारण अंग्रेजों के कपड़ा बाज़ार के अनुरूप ही किया जाता था। नील की खेती करने वाले किसानों को मुख्यतया तीन कारणों से असंतोष था:

- नील उगाने के लिए उन्हें बहुत कम भुगतान किया जाता था।
- नील की खेती लाभप्रद भी नहीं थी क्योंकि इसकी और खाद्यान फसलों की अवधि एक ही थी।
- नील की खेती के परिणामस्वरूप मिट्टी की उर्वराशक्ति समाप्त होना।

चित्र 7.2

इसके फलस्वरूप खाद्यान्नों के भंडार का अभाव हो गया। किसानों को उन व्यापारियों और दलालों के हाथों परेशान होना पड़ा जिन पर उन्हें अपने सामान को बेचने, और कभी कभार

तो बहुत सस्ते दामों पर बेचने के लिए निर्भर होना पड़ता था। उन्होंने जमींदारों को अपना वर्चस्व बनाये रखने और उनके द्वारा शासित क्षेत्रों में उनकी समस्याओं के समाधान करने के लिए समर्थन दिया। किसानों ने बंगाल में नील की खेती न किए जाने के लिए एक अभियान चलाया। हिन्दु और मुसलमान किसानों ने मिलकर हड़तालें की और सबने मिलकर मालिकों पर कानूनी केस दर्ज करा दिए। प्रैस और मिशनरियों ने इनका समर्थन किया। नवम्बर 1860 में सरकार ने आदेश जारी किया, जिसमें अधिसूचित किया गया कि रैय्यतों को नील की खेती करने के लिए बाध्य करना गैर-कानूनी है। विद्रोहियों के लिए इसे बड़ी जीत माना गया।

चित्र 7.3 : बंगाल में नील की कृषि

3. फरायज़ी आंदोलन (1838-1848): यह अंग्रेजी सरकार के विरूद्ध सर्वप्रथम ''कोई कर नहीं'' दिए जाने संबंधी अभियान था जिसका नेतृत्व शरायतुल्लाह खान और दादू मियां ने किया। उनके स्वयंसेवकों की टुकड़ियों (बैंडूस) ने नील बागान के मालिकों और ज़मीदारों से बड़ी बहादुरी के साथ युद्ध किया। इसने बंगाल के सभी खेतीहरों को भू-स्वामियों के अत्याचार और गैर-कानूनी वसूलियों के विरूद्ध एकजुट कर दिया।

4. वहाबी आंदोलन (1830 - 1860): इस आंदोलन के नेता थे रायबरेली के सैयद अहमद बरेलवी जो कि अरब के अब्दुल वहाब और दिल्ली के संत शाह वलीउल्लाह की शिक्षाओं से बहुत प्रभावित थे। मूलतः यह आंदोलन धार्मिक प्रकृति का था। शीघ्र ही कुछ स्थानों पर इसने वर्ग संघर्ष का रूप ले लिया, विशेष रूप से बंगाल में जहाँ सांप्रदायिक विभेदों के बावजूद किसान अपने ज़मीदारों के विरूद्ध एकजुट हुए।

7.2.2 किसान विद्रोह की सार्थकता

अंग्रेजों की आक्रामक आर्थिक नीतियों ने भारत की पारंपरिक कृषि प्रणाली को तहस-नहस कर दिया और किसानों की हालत को दयनीय बना दिया। देश के विभिन्न भागों में होने वाले किसान विद्रोह मुख्यतः इन्हीं नीतियों से निर्देशित थे। यद्यपि इन विद्रोहों का उद्देश्य भारत से अंग्रेज़ी राज को उखाड़ फेंकने का नहीं था, फिर भी इन्होंने भारतीयों में एक जागरूकता अवश्य पैदा की। अब उन्होंने और दमन के विरूद्ध संगठिन होने और मिलकर इसके खिलाफ लड़ने की आवश्यकता अनुभव की। संक्षेप में कहें तो इन विद्रोहों ने अनेक अन्य प्रतिरोधों के लिए भूमिका तैयार की जैसे कि पंजाब में सिखों के युद्ध और अंत में 1857 का विद्रोह।

क्रियाकलाप 7.1

अपने दिन प्रतिदिन के जीवन में हम सब भी विरोध प्रदर्शित करते हैं यह प्रतिरोध, विद्रोही आंदोलनों से किस प्रकार भिन्न हैं? कुछ विद्रोही आंदोलनों को कौन-सी चीज़ लोकप्रिय बनाती है। अपने मित्रों, समवयस्क समूहों या परिवार के साथ इन प्रश्नों पर चर्चा कीजिए। अधिक से अधिक 50 शब्दों में इस चर्चा के संबंध में एक टिप्पणी लिखिए।

7.2.3 जनजातीय विद्रोह

एक अन्य समूह जिसने अंग्रेजी राज के विरूद्ध विद्रोह किया वे थे जनजाति के लोग। जनजातीय समूह भारतीय जीवन का एक महत्वपूर्ण और अभिन्न हिस्सा थे। इनके सहयोजन और तत्पश्चात् इन्हें अंग्रेजी प्रदेशों में सम्मिलित किए जाने से पहले इनकी निजी सामाजिक और आर्थिक प्रणालियाँ थीं। यह प्रणालियाँ पारंपरिक प्रकृति की थीं और जनजातियों की आवश्यकताओं को संतुष्ट करती थीं। प्रत्येक समुदाय का एक मुखिया होता था जो उस समुदाय के सभी मामलों के प्रबंधन में पूरी तरह स्वतंत्र होता थे। जमीन और जगल उनकी जीविका के मुख्य संसाधन थे। जीवित रहने के लिए जिन बुनियादी चीजों की उन्हें आवश्यकता होती थी उनकी पूर्ति जंगलों से होती थी। जनजातीय समुदाय गैर-जनजातीय समुदायों से बिलकुल अलग-अलग रहते थे।

अंग्रेजी नीतियाँ जनजातीय समाज के लिए बहुत हानिकर सिद्ध हुई। इसने उनकी अपेक्षाकृत आत्म-निर्भर अर्थव्यवस्था और समुदायों को नष्ट कर दिया। विभिन्न प्रदेशों के जनजातीय समूहों ने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह कर दिया। उनके आंदोलन गैर-औपनिवेशिक प्रकृति के थे क्योंकि वे सभी औपनिवेशिक प्रशासन के विरोध में चलाये गये थे।

जनजातीय लोग पारंपरिक हथियारों, विशेष रूप से धनुष बाणों का प्रयोग करते थे और अक्सर हिंसक हो जाते थे। अंग्रेजों ने इनका सख्ती से दमन कर इन्हें अपराधी और समाज विरोधी घोषित कर दिया। इनकी सम्पत्ति पर कब्ज़ा कर लिया गया। उन्हें जेलों में डाल दिया गया और कइयों को फांसी पर चढ़ दिया गया। जनजातीय आंदोलन भारत के कुछ प्रदेशों तक ही सीमित रहा। परंतु जहाँ तक उपनिवेश-विरोधी आंदोलनों का प्रश्न हैं यह लोग इसमें भाग लेने के मामले में अन्य सामाजिक समूहों से किसी प्रकार भी पीछे नहीं रहे। अब हम कुछ मुख्य जनजातीय विद्रोहों के संबंध में पढ़ेंगे जो अंग्रेजी शासन के विरूद्ध खड़े हुए:

1. **संथाल विद्रोह** (1855-1857)**:** संथालों के गढ़ को दमन-ए-कोह अथवा संथाल परगना कहा जाता था। इसका विस्तार उत्तर में बिहार के भागलपुर से दक्षिण में उड़ीसा तक, हज़ारीबाग से बंगाल की सीमा तक विस्तृत था। अन्य जनजातियों की तरह संथाल भी जंगलों और वनों में अपने जीवन यापन के लिए कठिन परिश्रम करते थे। वे अपनी जमीन पर तब तक खेतीबाड़ी करके शांतिपूर्ण जीवन यापन करते रहे जब तक कि अंग्रेज अधिकारी व्यापारियों, साहूकारों (ऋणदाताओं), ज़मीदारों और थोक सौदागरों को अपने साथ नहीं ले आए। वे उन्हें सामान उधार लेने और फसल के समय भारी ब्याज सहित इसे वापिस करने के लिये मजबूर करते थे। जिसके परिणामस्वरूपक कई बार उन्हें महाजनों को न केवल अपनी फसल देनी पड़ती थी, बल्कि इसके साथ ही अपने हल, बैल और अंत में ज़मीन भी देने पर मजबूर होना पड़ता था। बहुत जल्दी ही वे बंधुआ मजदूर बन जाते थे और सिर्फ अपने ऋणदाताओं की ही सेवा कर सकते थे। शांतिपूर्ण जनजातीय समुदायों ने अब अपने शोषक अंग्रेजी अफसरों, ज़मीदारों और ऋणदाताओं के विरूद्ध शस्त्र उठा लिए थे। संथाल विद्रोहियों का नेतृत्व सिद्धु और कानु कर रहे थे। उन्होंने अंग्रेजी सरकार के विरूद्ध लड़ाई में बहादुरी से मुकाबला किया। दुर्भाग्यवश इस असमान स्तर की लड़ाई में संथाल विद्रोह का दमन कर दिया गया था परंतु यह विद्रोह भविष्य के लिए कृषक संघर्षों के लिए एक प्रेरणा का स्रोत बना।

चित्र 7.4 तिरका मांझी

2. **मुंडा विद्रोह (1899-1900):** 1857 के पश्चात हुये अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रमुख विद्रोहों में से एक था मुंडा विद्रोह। पारंपरिक रूप से मुंडाओं को जंगलों की सफाई करने के रूप में कुछ विशेषाधिकार प्राप्त थे जिन्हें किसी अन्य जनजाति को नहीं दिया जाता था। परंतु अंग्रेजों के आने से बहुत समय पहले से ही व्यापारियों और ऋणदाताओं के हाथों इस भू-पद्धति को विनष्ट किया जा रहा था। परंतु जब अंग्रेज वास्तव में इस क्षेत्र में आए और जब उन्होंने ठेकेदारों और सौदागरों को इस क्षेत्र से परिचित कराया तो उन्होंने इस पद्धति को और भी तेजी से नष्ट करने में सहायता की। इन ठेकेदारों को इनके साथ काम करने के लिए इकरारनामे में बंधे मज़दूरों की आवश्यकता थी। अंग्रेजों और उनके ठेकेदारों के हाथों मुंडाओं के इस विस्थापन ने महत्वपूर्ण मुंडा विद्रोह को जन्म दिया। इस विद्रोह का बहुत महत्वपूर्ण नेता था बिरसा मुंडा जो कि अन्य लोगों की तुलना में अधिक जागरूक था क्योंकि उसने मिशनरियों से कुछ शिक्षा प्राप्त की थी। उसने अपनी जनजाति के लोगों को पवित्र वृक्ष कुंजों की पूजा को जीवित रखने के लिए प्रेरित किया। अंग्रेजों द्वारा अपनी बंजर जमीन पर कब्ज़े से बचने के लिए ऐसी कार्रवाई करना बहुत महत्वपूर्ण था। इसके लिए बिरसा मुंडा ने ऋणदाताओं/महाजनों और अंग्रेज अधिकारियों के विरूद्ध लड़ाई की। उसने पुलिस थानों, गिरजाघरों और धर्मप्रचारकों (मिशनरियों) पर आक्रमण किया। दुर्भाग्यवश विद्रोहियों की हार हुई और शीध्र ही सन् 1900 में जेल में मुंडा की मृत्यु हो गई। परंतु उसका बलिदान व्यर्थ नहीं गया।

1908 के छोटानागपुर काश्तकारी अधिनियम (टीनेंस एक्ट) के अधीन लोगों को भूमि पर कुछ स्वामित्व अधिकार प्रदान किए गए और जनजातियों की बंधुआ मजूदरी पर भी रोक लगा दी गई। बिरसा मुंडा, मुंडा विद्रोह के निर्माता और एक ऐसे व्यक्ति बन गए जिन्हें आज भी याद किया जाता है।

चित्र 7.5 बिरसा मुंडा

क्या आप जानते हैं

इनडेन्चईः इनडेन्चई मजदूर से तात्पर्य है वह व्यक्ति जिसे एक संविदा (ठेके) के आधार पर एक निर्धारित समयावधि के लिए किन्हीं दूसरे व्यक्तियों के लिए काम करना पड़ता है। उस व्यक्ति को विदेश/किसी नए स्थान पर काम करना पड़ता है और इसके बदले में उसे यात्रा करने के लिए किरायें का भुगतान, आवास और खाना दिया जाता है।

3. **जयंतिया और गारों विद्रोह** (1860-1870) : प्रथम एंग्लो-बर्मा युद्ध के उपरांत अंग्रेजो ने ब्रह्मपुत्र घाटी (आधुनिक असम) को सिल्हट (आज का बांग्लादेश) से जोड़ने के लिए एक सड़क बनाने की योजना बनाई। भारत के उत्तर-पूर्वी भाग (आधुनिक मेघालय) में जयंतिया और गारों लोगों ने इस सड़क के निर्माण का विरोध किया जो कि अंग्रेजों के लिए सैन्यदलों के आवागमन के लिए यौद्धिक महत्व की थी। 1827 में जयंतिया लोगों ने काम को रोकने की कोशिश की और बहुत जल्दी ही यह असंतोष पड़ोस की गारो पहाड़ियों तक फैला गया। सतर्क अंग्रेजों ने कुछ जयंतिया और गारो गांवों को जला दिया। अंग्रेज़ों द्वारा सन् 1860 के दशक में गृहकर और आयकर शुरु किए जाने पर यह शत्रुता और भी बढ़ गई। जयंतियाओं के नेता यू कियांग नाँगवाह को गिरफ्तार कर लिया गया और सार्वजनिक रूप से उसे फांसी दे दी गई और गारो नेता तोगान संगमा अंग्रेजों से हार गए।

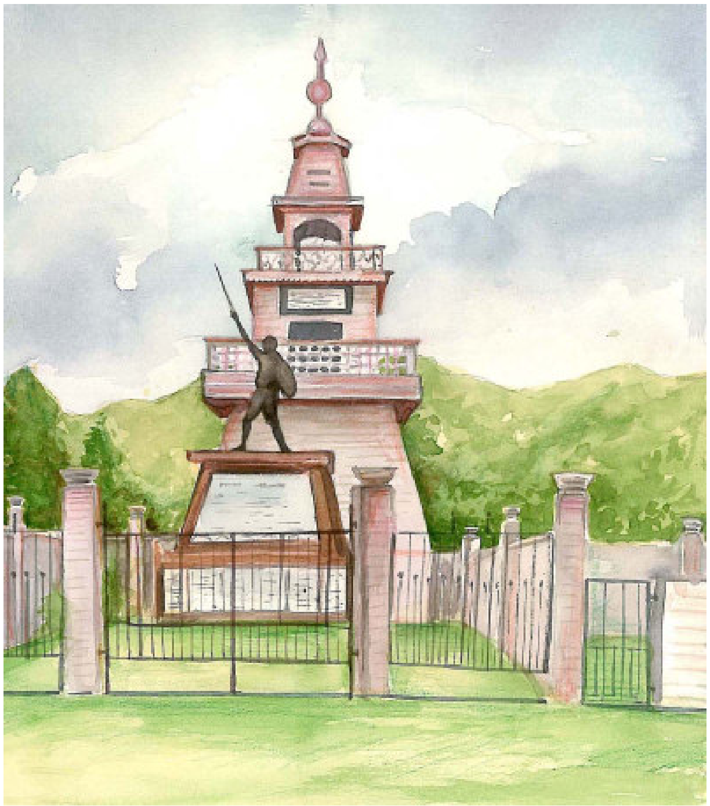

चित्र 7.6 यू कियांग नाँगवाह स्मारक

4. **भीलों का विद्रोह** (1818-1831) : भीलों की अधिकांश आबादी थी खानदेश में (आधुनिक महाराष्ट्र एवं गुजरात) खानदेश 1818 में अंग्रेजों के कब्जे में आ गया। भीलों ने उन्हें विदेशी माना। बाजीराव द्वितीय के बागी मंत्री त्रिंबकजी के उकसाने पर उन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह कर दिया।

5. **कोल विद्रोह** (1831-1832) : छोटानागपुर क्षेत्र के सिंहभूम में कोलों को अपने मुखियाओं के अधीन स्वायत्तता प्राप्त थी परंतु अंग्रेजों के आने से उनकी स्वतंत्रता के लिए खतरा पैदा हो गया था। तदोपरांत जनजातीय ज़मीनों के हस्तांतरण और साहूकारों, व्यापारियों और अंग्रेजी कानूनों के आने से वहाँ बहुत तनाव पैदा हो गया था। इसने कोल जनजाति को संगठित होने और विद्रोह करने के लिए उकसाया। इसका इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि अंग्रेजों को इस विद्रोह को दबाने के लिए दूर-दूर के स्थानों से सैनिक टुकड़ियाँ मंगवानी पड़ीं।

6. **मैप्पिला विद्रोह** (1836 - 1854) : मैप्पिला, भाड़े पर खेतीबाड़ी करने वाले, भूमिहीन मज़दूर और मालाबार क्षेत्र के मछुआरे मुसलमान थे। मालाबार क्षेत्र पर अंग्रेजों के अधिकार करने और नए भूमि कानूनों के साथ ज़मीन के मालिकों (मुख्यतया हिन्दु) द्वारा अत्याचारों ने मैप्पिला लोगों को अंग्रेजों के विरूद्ध विद्रोह करने के लिए उकसाया। मैप्पिला लोगों के दमन में अंग्रेजों को बहुत वर्ष लग गए।

पाठगत प्रश्न 7.1

1. निम्नलिखित पदों का एक-एक वाक्य बनाकर इनकी व्याख्या करें।

   (क) फकीर (ख) महाजन (ग) मैप्पिला

2. नीचे दिए गए रिक्त स्थानों में ऐसे तीन समूहों की सूची बनाएँ जो भारतीय किसानों के शोषण में सम्मिलित थे।

   (क) ....

   (ख) ....

   (ग) ....

3. नीचे दिए गए रिक्त स्थान में जन विद्रोह व प्रतिरोध के तीन कारण लिखेंः-

   (क) ....

   (ख) ....

   (ग) ....

7.3 1857 का विद्रोह - कारण, दमन और परिणाम

1857 का विद्रोह 10 मई को जब प्रारंभ हुआ जब भारतीय सैनिकों ने मेरठ में बगावत कर दी। अंग्रेजों ने इसे सिपाही विद्रोह का नाम दिया, परंतु अब इसे अंग्रेजों के विरूद्ध स्वाधीनता प्राप्ति का प्रथम युद्ध माना जाता है। भारतीय सैनिकों ने अपने यूरोपीय अधिकारियों को मार गिराया

और दिल्ली की ओर कूच कर दिया। वे लाल किले में प्रवेश कर गये और उन्होंने वयोवृद्ध और शक्तिहीन मुगल बादशाह बहादुरशाह जफ़र को भारत का सम्राट घोषित कर दिया। यह विद्रोह अंग्रेजों की आक्रामक साम्राज्यिक नीतियों के विरूद्ध, एक बड़ा औपनिवेशीय- विरोधी आंदोलन था। वास्तव में यह आंदोलन अंग्रेजी शासन के विरूद्ध एक आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक संघर्ष था। क्रोध की इस विस्फोटक अभिव्यक्ति और असंतोष ने भारत के बहुत बड़े भाग में औपनिवेशिक शासन की नींव हिलाकर रख दी। अब हम, भारतीय लोगों में अंग्रेजी शासन के विरूद्ध उभरे असंतोष के कारणों के संबंध में अध्ययन करेंगे जिन्होंने विद्रोह करवाया।

चित्र 7.7 1857 के विद्रोह के प्रमुख केन्द्र

(क) **राजनीतिक कारणः** राज्यों को अपने राज्य में मिलाने की नीति (कब्जे) के द्वारा औपनिवेशीय विस्तार की प्रकृति, भारतीय शासकों में असंतोष का प्रमुख कारण बना। अंग्रेज जमीन

प्राप्त करना और इंग्लैण्ड के लिए यथासंभव अधिक से अधिक धन की उगाही करना चाहते थे। विलय की नीति को अधिग्रहण का सिद्धांत 'डॉक्टरीन ऑफ लैप्स' कहा गया और सहायक संधि जिसके परिणामस्वरूप अनेक स्वतंत्र साम्राज्यों को अंग्रेजी शासन में मिला लिया गया। यह वे प्रदेश थे जिनको अंग्रेजी शासन की सुरक्षा मिली हुई थी परंतु उनके शासकों का निधन हो चुका था और उनके पीछे उनके राज्य का कोई नैसर्गिक उत्तराधिकारी नहीं था जिसके परिणामस्वरूप उनके दत्तक पुत्र उनकी संपत्ति के उत्तराधिकारी नहीं बन सकते थे और न ही अंग्रेजों द्वारा उन्हें प्रदान की जा रही पेंशन प्राप्त कर सकते थे। इस प्रकार लॉर्ड डल्हौजी ने सतारा के मराठा राज्यों नागपुर, झांसी और अन्य कई छोटे-छोटे राज्यों को अपने अंग्रेजी शासन में सम्मिलित कर लिया। बाजी राव द्वितीय की मृत्यु के बाद उसे मिलने वाली पेंशन को बंद कर दिया गया और उनके गोद लिए गए पुत्र नाना साहिब के पेंशन प्राप्त करने के दावे को नकार दिया गया। अनेक भारतीय शासकों को ईस्ट इंडिया कंपनी का यह हस्तक्षेप पसंद नहीं आया। अधिग्रहण के सिद्धांत से पहले भारतीय शासकों को अपने राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में गोद लेने का अधिकार प्राप्त था चाहे उनकी अपनी कोई संतान नहीं थी। परंतु अब उन्हें इसके लिए अंग्रेजों से पूर्वानुमति लेनी पड़ती थी।

विलय की नीति का प्रभाव न केवल शासकों पर बल्कि उन सब पर भी पड़ा जो उन पर निर्भर थे जैसे सैनिक, शिल्पकार, और यहां तक कि अभिजात वर्ग। यहाँ तक कि पारंपरिक विद्वानों और धार्मिक वर्गों को मिलने वाला संरक्षण भी समाप्त कर दिया गया, जो इन शासकों से इन्हें मिल रहा था। हज़ारों की संख्या में जमींदारों, अभिजातों और पोलिगरों का अपनी ज़मीन और इससे मिलने वाले लगान पर से अधिकार समाप्त हो गया। कुशासन के आधार पर अवध पर कब्जा हो जाने पर नवाब ने रोष प्रकट किया जो कि अंग्रेजों के प्रति वफादार था। जब अंग्रेजों ने अवध को अपने कब्ज़े में ले लिया तो उसके बाद बेरोज़गार हुये लोगों को कोई भी वैकल्पिक रोज़गार उपलब्ध नहीं करवाएं गए। यहाँ तक कि किसानों को भी और ऊँची दरों पर कर और अतिरिक्त भूमि-लगान अदा करना पड़ा।

लोगों के बुनियादी रहन-सहन, पारंपरिक विश्वासों, मान्यताओं और मानकों में लगातार अंग्रेजों द्वारा हस्तक्षेप किए जाने को जनमानस द्वारा उनके धर्म के लिए खतरा माना जाने लगा था। अंग्रेज प्रशासक धीरे-धीरे आक्रामक (घमंडी) बनते चले गए और लोगों तथा अंग्रेजों के बीच खाई परस्पर बढ़ती चली गई।

(ख) **आर्थिक कारणः** विद्रोह का एक और महत्वपूर्ण कारण था पारंपरिक भारतीय अर्थव्यवस्था का विघटन और इसका अंग्रेजी अर्थव्यवस्था के अधीन होना। अंग्रेज, भारत के साथ व्यापार के लिए आये थे, परंतु शीध्र ही उन्होंने देश को शोषित करने और इसे दरिद्र बना देने का निर्णय ले लिया। उन्होंने ने यहाँ से इतना ज्यादा से ज्यादा धन और कच्चा माल ले जाने का प्रयास किया जितना कि उनके लिए ले जाना संभव था। सभी ऊँचे और अधिक वेतन वाले पद उन्होंने अपने लिए आरक्षित कर लिए। अपने व्यापार को बढ़ाने और विदेशी वस्तुओं के आयात-निर्यात के लिए उन्होंने राजनीतिक नियंत्रण का प्रयोग किया। भारत से संपदा की लूटपाट और धन निकासी के लिए हर उपाय का प्रयोग किय गया। अंग्रेजी

नीतियों के अधीन भारतीय अर्थव्यवस्था को अब तक झकझोर कर रख दिया था। क्योंकि उन्होंने भारतीय व्यापार और उद्योगों को नष्ट करने के लिए काम किया इसलिए भारतीय हस्तशिल्प पूरी तरह तहस-नहस हो गए थे। जिन शिल्पकारों को शाही संरक्षण मिला हुआ था, उन राज्यों को अंग्रेजी राज में विलय के उपरांत वे अत्यंत दरिद्र हो गए थे। वे अंग्रेजी कारखाने में बने उत्पादों का मुकाबला नहीं कर सकते थे क्योंकि वहाँ पर मशीनों का प्रयोग किया जाता था। इससे भारत अंग्रेजी सामान का बहुत ही बढ़िया उपभोक्ता और इंग्लैण्ड के उद्योगों के लिए कच्चे माल की पूर्ति का बहुत बड़ा आपूर्तिदाता बन गया था। अंग्रेजों द्वारा मशीनों से बुने गए सस्ते कपड़े भारत में बेचे जाते थे जिससे भारत के कुटीर उद्योग नष्ट हो गए। इसके परिणामस्वरूप लाखों शिल्पकार बेकार हो गए। अंग्रेजों ने इंग्लैण्ड स्थित कारखानों के लिए कच्चा माल भी यहीं से भेजा जाता था। इससे भारतीय बुनकरों के लिए यहाँ कुछ भी नहीं बचा। अंग्रेजों ने भारतीय सामान पर भारी कर लागू कर दिया। अब वे अत्यधिक लाभ कमा सकते थे क्योंकि उनके सामान से प्रतिस्पर्धा के लिए अब कोई भी भारतीय उत्पाद नहीं था। इस प्रकार अंग्रेजों ने, भारत की संपूर्ण धन-संपदा और प्राकृतिक संसाधनों से इसे वंचित कर दिया।

भारत के शोषण के लिए अंग्रेजों ने और किन उपायों का प्रयोग किया? कच्चा माल खरीदने और अपना तैयार माल बेचने के लिए उन्होंने भाप से चलने वाले जहाज (स्टीमशिप्स) और रेलवे की शुरूआत की। रेलवे ने अंग्रेजों के समक्ष एक बहुत बड़ा बाज़ार खोल दिया और भारतीय कच्चे माल को विदेशों में निर्यात करना बहुत सरल बना दिया। रेलवे ने कच्चे माल का उत्पादन करने वाले क्षेत्रों को निर्यात करने वाले बंदरगाहों से परस्पर जोड़ दिया। इसके परिणामस्वरूप अंग्रेजी वस्तुओं से भारतीय बाज़ार भर गया। परंतु क्या आप जानते हैं कि रेलवे ने देश में राष्ट्रीय जागरण में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसने लोगों और उनके विचारों को परस्पर नजदीक लाने में मदद की, जिसकी अंग्रेजों ने कभी कल्पना भी नहीं की होगी। 1853 में डल्हौजी ने कलकत्ता से आगरा के लिए प्रथम टेलीग्राफिक लाइन खोली। उन्होंने भारत में डाक सेवा भी प्रारंभ की।

क्योंकि भूमि उनके लिए लगान वसूली का एक बहुत बड़ा स्रोत था, इसलिए अंग्रेजों ने भूमि से लगान वसूली बढ़ाने के लिए अनेक उपायों के बारे में विचार किया। भूमि लगान की मांग बढ़ाने की औपनिवेशीय नीति के परिणामस्वरूप बहुत बड़ी संख्या में किसानों को लगान वसूल करने वाले ज़मीदारों, व्यापारियों और ऋणदाताओं के हाथों अपनी ज़मीन से हाथ धोना पड़ा। इसे रैय्यवाड़ी और महलवाड़ी पद्धतियों के जरिए लागू किया गया। बंगाल, बिहार और उड़ीसा की स्थाई व्यवस्था (सैटलमैंट) में भूमि पर किसानों के आनुवांशिक उत्तराधिकार को मान्यता प्राप्त नहीं थी। दूसरी ओर यदि वे अपने कुल उत्पादन का 10वां/11वां भाग अदा नहीं कर पाते थे तो उनकी संपत्ति को बेच दिया जाता था। इस स्थिति से बचने के लिए किसान प्रायः कर्जदाताओं से ऊँची ब्याज दरों पर कर्ज लेते थे। यहाँ तक कि कई बार उन्होंने अपनी ज़मीन कर्जदाताओं के हाथों बेच भी दी थी। अधिकारी भी उन किसानों को परेशान करते थे जो न्याय न मिलने के विरूद्ध और भविष्य में परेशान किए जाने के डर से बचने के लिए अदालतों में जाते थे। अंग्रेजों द्वारा निर्मित ज़मीदारों का नया वर्ग उनका राजनीतिक सहयोगी बन गया। उन्होंने आवश्यकता के समय उन्हें समर्थन दिया और अंग्रेजों और लोगों के बीच मध्यस्थ की भूमिका निभाई। यहाँ तक कि

कुछेक ने तो स्वतंत्रता आंदोलन के विरूद्ध अंग्रेजों का साथ भी दिया। किसानों और शिल्पियों के आर्थिक पतन की छवि 12 प्रमुख और 1770 से 1857 तक के अनेक छोटे-छोटे अकालों में प्रदर्शित होती है। इन सभी घटकों ने अंग्रेज-विरोधी विचारधारा को फैलाने में सहायता की जो कि अंत में 1857 के विद्रोह के रूप में प्रस्फुटित हुई।

(ग) **सामाजिक और धार्मिक कारणः** अंग्रेज, भारतीय जनमानस की भावनाओं के प्रति संवेदनशील नहीं थे। सती प्रथा और कन्या शिशुओं की हत्या का विरोध, विधवा पुनर्विवाह और महिलाओं के लिए शिक्षा जैसे सामाजिक सुधारों ने अनेक लोगों को नाराज कर दिया था। लोगों के ईसाई बनाने के उद्देश्य से ईसाई-मिशनरियों ने स्कूल और कालेज खोले। उन्हें एक ऐसे जनसमूह की भी आवश्यकता थी जो उनका सामान, खरीदने की दृष्टि से पर्याप्त शिक्षित और आधुनिक हो, परंतु अंग्रेजों के हितों के लिए हानिकारक सिद्ध न हो। इस स्थिति ने लोगों में यह विश्वास पैदा कर दिया कि अंग्रेज सरकार उनके धर्म को समाप्त करके उन्हें ईसाई धर्म में परिवर्तित करने के लिए मिशनरियों के साथ मिली हुई। 1850 के 22वे अधिनियम के पास होने से धर्मांतरित ईसाईयों को अपनी पैतृक संपत्ति पाने का अधिकार मिल गया। स्वाभाविक था कि इस नये कानून को इसाई धर्मांतरण करने वाले ईसाईयों के लिए एक रियासत के रूप में व्याख्यायित किया गया, जिसने लोगों में और अधिक चिंता और डर पैदा कर दिया।

1806 में मद्रास प्रेसिडेंसी में सैनिकों की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुँचाई गई। हिन्दुओं को उनके माथे से उनके धार्मिक प्रतीकों को मिटाने और मुसलमानों को उनकी दाढ़ी कटवाने के लिए बाध्य किया गया, हालांकि सैनिक विद्रोह को दबा दिया परंतु यह स्पष्ट था कि अंग्रेजों ने भारतीय सैनिकां को कभी-भी समझा नहीं और न ही कभी उनकी ओर ध्यान दिया। सैनिकों की सत्यनिष्ठा की और अधिक अवमानना की गई, अनेक सैनिक सुधारों के माध्यम से जिनके अधीन उनके लिए समुद्रपार सेवा पर जाना आवश्यक कर दिया गया। इसने उनकी धार्मिक भावनाओं को भड़का दिया। उनमें यह धारणा बनी हुई थी कि समुद्रपार यात्रा का तात्पर्य होगा अपनी जाति से बाहर कर दिया जाना।

(घ) **सेना में असंतोषः** ईस्ट इंडिया कंपनी की सेना के सैनिक किसान परिवारों से आते थे, जो कि सरकारी नीतियों से अत्यधिक प्रभावित थे। भारतीय सैनिकों को सूबेदारों से ऊपर के पदों पर नहीं रखा जाता था। कुछ सैनिक यदि उन्हें समुद्रपार की ड्यूटी पर भेजा जाए तो विशेष भत्ता चाहते थे, कभी-कभार उनको यह भत्ता दिया जाता था परंतु अधिकांश समय कुछ भी नहीं दिया जाता था। इसलिए उन सैनिकों ने अपने अधिकारियों पर अविश्वास करना शुरू कर दिया। इन घटनाओं ने अपने निजी ढंग से 1857 के विद्रोह में योगदान दिया। सैनिकों को और भी कई प्रकार की शिकायतें थीं। उनको अपने बराबर पद के अंग्रेजों से कम वेतन अदा किया जाता था। इस कारण भारतीय सैनिकों का मनोबल बहुत दुर्बल हो गया था। दूसरी ओर जब भी सैनिक 'काला पानी' के पार अर्थात् समुद्र और सागर पार जाने के लिए मना करते जो कि उनके लिए धर्मविरूद्ध था, तो अंग्रेज उनके साथ क्रूरता से पेश आते।

(ङ) **तात्कालिक कारणः** भारतीयों में गहन आक्रोश उभर रहा था और वे विद्रोह करने के किसी अवसर की तलाश में थे। भूमिका तैयार थी। केवल उस भड़काने के लिए मात्र एक चिंगारी

की आवश्यकता थी। 1856 में चिकनाई वाले कारतूस शुरू किए जाने ने उस विद्रोह की आग को भड़काने के लिए चिंगारी का काम किया। सरकार ने पुरानी बंदूक (मस्केट), 'ब्राऊन बैग्स' को 'ऐनफील्ड राइफ्ल' से बदलने का निर्णय लिया। एनफील्ड राइफल में बारूद भरने (लोड) की प्रक्रिया में कारतूस (कार्टरिज) को मुँह तक लाकर उसके ढक्कन को दांतों से काटकर खोलना पड़ता था। 1857 जनवरी में सैनिकों में यह अफवाह फैली हुई थी कि चिकनाई लगे कारतूसों (कार्टरिजों) में गाय और सूअर की चर्बी लगी हुई है। गाय हिन्दुओं के लिए पवित्र है और सुअरकी मुसलमानों के लिए मनाही है। अब सैनिकों को विश्वास हो गया था कि चर्बी वाले कारतूस शुरू करना हिन्दुओं और मुसलमानों का धर्म भ्रष्ट करके उनकी धार्मिक भावनाओं को आहत करने के लिए जानबूझ कर किया गया प्रयास है। इसने 29 मार्च 1857 को सिपाहियों के विद्रोह में आग में घी का काम किया।

7.3.2 विद्रोह के चरण

मंगल पाण्डे पहला ऐसा सैनिक था जिसने खुले रूप में आदेशों का उल्लंघन किया। कलकत्ता के पास बैरकपुर में 29 मार्च 1857 को उसने दो अंग्रेज अफसरों की हत्या कर दी। उसे गिरफ्तार करके उस पर मुकदमा चलाया गया और फांसी दे दी गई। बैरकपुर की रेजीमेंट को तोड़ दिया गया। मंगल पाण्डे का समाचार बहुत जल्दी देश के दूसरे भागों तक पहुंच गया और परिणामस्वरूप खुले विद्रोह भड़क उठे। सबसे निर्णायक विद्रोह मेरठ में हुआ जहाँ पर घुड़सवार (कैवेलरी) रेजीमेंट के 85 सैनिकों को चर्बी वाले कारतूसों का प्रयोग करने से इंकार करने पर 2-10 वर्षों के कारावास की सजा दे दी गई। इसके अगले ही दिन अर्थात् 10 मई 1857 को तीन रेजीमेंटों ने खुली बगावत कर दी। उन्होंने अंग्रेज अफसरों की हत्या कर दी और अपने साथी सैनिकों को छुड़ाने के लिए जेलों को तोड़ दिया। उन्होंने दिल्ली की ओर कूच (मार्च) शुरू कर दिया, जहाँ उनके साथ स्थानीय पैदल सेना और सामान्य लोग भी मिल गए। बागियों ने दिल्ली पर कब्ज़ा कर लिया और अनेक अंग्रेज अफसरों की हत्या कर दी। उन्होंने मुगल बादशाह बहादुरशाह को भारत का सम्राट घोषित कर दिया।

चित्र 7.8 मंगल पाण्डे

दिल्ली से यह विद्रोह अन्य स्थानों तक फैल गया। कानपुर में नाना साहिब को पेशवा घोषित कर दिया गया। उसकी सैनिक टुकड़ियों (ट्रूप्स) की कमान तांत्या टोपे और अजीमुल्लाह ने संभाली। लखनऊ में बेगम हजरत महल की सहायता मौलवी अहमदुल्ला ने की। झांसी में रानी लक्ष्मी बाई और आरा में कुंवर सिंह ने विद्रोह का नेतृत्व किया। बरेली में इसके नेता थे खान बहादुर खान। दिल्ली की हार ने अंग्रेजों की प्रतिष्ठा को बहुत चोट पहुँचाई थी। अपनी खोई हुई प्रतिष्ठा को वापिस हासिल करने के लिए उन्होंने पंजाब के अपने वफादार सैन्यबल की सहायता ली। सैनिक घेराबंदी चार महीने तक चली और अंततः 10 सितंबर 1857 को दिल्ली को पुनः जीत लिया गया। यह युद्ध दस महीने तक और चला जब तक गवर्नर जनरल, लॉर्ड केनिंग ने 8 जुलाई 1858 को, इस बगावती विद्रोह के समापन की घोषणा नहीं कर दी। झांसी की रानी लक्ष्मी बाई, तात्या टोपे और कुंवर सिंह ने बड़ी बहादुरी से अंग्रेजी सैन्य बल को टक्कर दी। रानी लक्ष्मी बाई ने बागी सैनिकों का नेतृत्व किया। उसने घोड़े पर सवार हो अंग्रेज घुड़सवार सैनिकों का डटकर मुकाबला किया परंतु उसका घोड़ा ठोकर से लड़खड़ा गिर पड़ा और उसकी मृत्यु हो गई। अंग्रेज कमांडर-इन-चीफ, सर ह्यूग रोज़ के अनुसार वे विद्रोहियों की सर्वश्रेष्ठ और सर्वाधिक वीर सैनिक नेता थीं। कुंवर सिंह का निधन बिहार में एक अन्य लड़ाई के दौरान हुआ। तांत्या टोपे को सोते हुए गिरफ्तार कर लिया गया। एक मुकदमा चलाकर उसे फांसी दे दी गई। इस प्रकार इन तीनों बहादुर नायकों का अंत हुआ और अंततः इस विद्रोह का अंग्रेजों द्वारा दमन कर दिया गया।

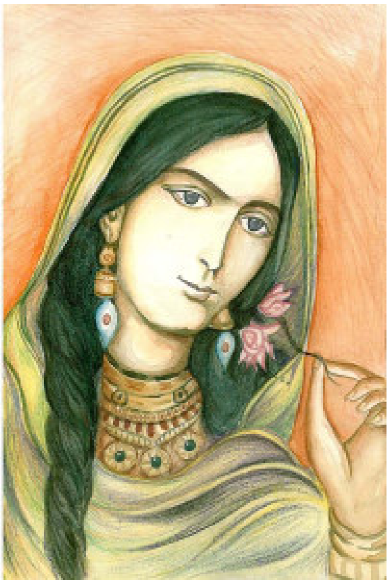

चित्र 7.9 बेगम हजरत महल

वृद्ध शहंशाह बहादुर शाह ज़फर को, उनके दो पुत्रों सहित, कारागार में डाल दिया गया। एक मुकदमे के पश्चात उसे रंगून में देश निकाला दे दिया गया, जहाँ पर 1862 में, 87 वर्ष की आयु में उनका देहांत हो गया। उसके पुत्रों को बगैर कोई मुकदमा चलाए ही दिल्ली में गोली मार दी गई। अब हम इस विद्रोह की असफलता के कारणों का गहराई से अध्ययन करेंगे।

क्रियाकलाप 7.2

1857 के विद्रोह के किस व्यक्तित्व ने आपको सबसे अधिक प्रभावित किया? क्या आप उनके किन्हीं दो ऐसे गुणों की पहचान कर सकते हैं जिन्हें आप भी अपने जीवन में उतारना चाहेंगे?

7.3.3 विद्रोह की प्रकृति

1857 के विद्रोह आंदोलन की चारों ओर आज भी एक बहस जारी है। अंग्रेज इतिहासकार 1857-1858 की घटनाओं को सैनिकों द्वारा की गई सैनिक बगावत मानते हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 1857 से पहले भी सैनिकों द्वारा अनेक विद्रोह किए गए। इसका एक उदाहरण है जुलाई 1806 में वेल्लूर की सैनिक बगावत। जहाँ भारतीय सैनिकों ने ईस्ट इंडिया कंपनी के गैरिज़न के खिलाफ विद्रोह किया था। बेशक बहुत जल्दी अनुशासन बहाल कर दिया गया था और यह विद्रोह सैनिक छावनी में दीवारों तक ही सीमित रहा।

परंतु यदि आप 1857 के तथ्यों का गहराई से अध्ययन करें तो आपको इसका अंतर स्पष्ट दिखाई देगा। विद्रोह के आंदोलन की शुरुआत सैनिकों द्वारा की गई थी परंतु बहुत बड़ी संख्या में असैनिक जनमानस भी इसके साथ जुड़ गए थे। किसानों और शिल्पियों द्वारा इसमें भाग लिए जाने की वजह से यह आंदोलन बहुत दूर-दूर तक फैला और एक लोकप्रिय घटना बन गया। यहां तक कि कुछ क्षेत्रों में साधारण जनता ने सैनिकों से पहले ही विद्रोह कर दिया था। इससे यही पता चलता है कि स्पष्टतया यह एक लोकप्रिय विद्रोह था। इसे हिन्दु मुस्लिम एकता के रूप में पहचाना गया। विभिन्न क्षेत्रों में भी एकता का अस्तित्व दिखाई दिया। देश के एक भाग के विद्रोहियों ने अन्य क्षेत्रों के लोगों को लड़ाई करने में सहायता की। इस विद्रोह को अंग्रेजी शासन के विरूद्ध भारत के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के रूप में देखा जाना चाहिए।

आप अनुभव करेंगे कि 1857 का विद्रोह एक आंदोलन नहीं बल्कि कई आंदोलन थे। यह किसी वर्ग का विद्रोह नहीं था। किसानों ने ज़मीदारों के विरूद्ध बगावत नहीं की उन्होंने सिर्फ अनाज के ऋणदाता व्यापारियों अथवा अंग्रेजों की भारतीय सरकार के विरूद्ध आक्रमण किए थे। परंतु उनकी नीतियों ने किसी विशिष्ट क्षेत्र को इतने गहरे से प्रभावित किया कि संपूर्ण क्षेत्र ने एक ही प्रकार से प्रतिक्रिया की। अवध और अन्य क्षेत्रों में विद्रोह इस प्रकार लोकप्रिय हुआ कि इसका संबंध समग्र रूप से लोगों पर पड़ा और उन सबने मिलकर इसका संचालन किया। अवध में ताल्लुकदारों और किसानों ने मिलकर इकट्ठे ही एक सामान्य शत्रु के विरूद्ध लड़ाई की। परंतु इसमें कोई संदेह नहीं कि 1857 में पहली बार विभिन्न जातियों, हिंदुओं और मुसलमानों से भारतीय सेना के लिए चयनित सैनिक, जमीदार और किसान एकजुट होकर अंग्रेजी सरकार के विरूद्ध एकजुट हुए। इसने अंग्रेजों के विरूद्ध बाद में हुये औपनिवेशीय विरोधी संघर्षों के लिए भी आवश्यक बुनियाद की सफल भूमिका निभाई।

7.4 विद्रोह की असफलता

यद्यपि यह विद्रोह भारत के इतिहास की एक बहुत बड़ी घटना रही है तथापि एक संगठित और शक्तिशाली शत्रु के विरूद्ध सफलता प्राप्त करने के लिए इनके पास बहुत कम ही अवसर थे।

विद्रोह के शुरु होने के एक वर्ष के भीतर ही इसे दबा दिया गया। 1857 के विद्रोह की असफलता के अनेक कारण थे। बागियों के उद्देश्य में एकरूपता नहीं थी। बंगाल के सैनिक मुगलों की खोई शानो-शौकत को पुनः जीवित करना चाहते थे जबकि नाना साहिब और तात्या टोपे ने मराठा शक्ति को पुनः स्थापित करने का प्रयास किया। रानी लक्ष्मी बाई ने झांसी को पुनः प्राप्त करने के लिए लड़ाई की जोकि उसने 'अधिग्रहण के सिद्धांत की' अंग्रेजी नीति के परिणामस्वरूप खो दी थी। दूसरे यह विद्रोह अधिक क्षेत्रों तक फैला हुआ नहीं था बल्कि उत्तर और मध्य भारत तक सीमित रहा।

यहाँ तक कि उत्तर में कश्मीर, पंजाब, सिंध और राजपुताना इस विद्रोह से दूर रहे। अग्रेज मद्रास और बंबई की रेजिमेंटों और सिख प्रदेशों की निष्ठा प्राप्त करने में सफल रहे। अफगानों और गोरखाओं ने भी अंग्रेजों को समर्थन दिया। अनके भारतीय शासकों ने विद्रोहियों की सहायता करने से इंकार कर दिया। मध्य और उच्च वर्गों और आधुनिक शिक्षित भारतीयों ने भी विद्रोह का समर्थन नहीं किया। तीसरे, इस आंदोलन का नेतृत्व बहुत कमज़ोर था। भारतीय नेताओं में संगठन और संयोजन की योग्यता नहीं थी। विद्रोही नेताओं की अंग्रेज सैनिकों से कोई तुलना नहीं थी। अधिकांश नेताओं के विचार केवल उनके निजी हितों तक सीमित थे। इनका उद्देश्य केवल गहन निजी लाभ ही था। उन्होंने केवल अपने निजी प्रदेशीय क्षेत्रों की स्वाधीनता के लिए लड़ाई की। कोई भी ऐसा राष्ट्रीय नेता उभर कर नहीं आया जो इस आंदोलन का समन्वय करके इसे कोई उद्देश्य और दिशा प्रदान कर पाता। लक्ष्मी बाई, तात्या टोपे और नाना साहिब बहुत साहसी थे परंतु वे अच्छे सैन्य जनरल नहीं थे। नाना साहिब के बच निकलने और बहादुर शाह जफर की मृत्यु से पेशवागिरी और मुगल शासन का अंत हो गया।

विद्रोहियों के पास शस्त्रों और धन का भी अभाव था। जो भी शस्त्र थे वे पुराने और नकारा हो चुके थे। वे अंग्रेजों के संवेदनशील और आधुनिक शस्त्रों का सामना नहीं कर सकते थे। बागियों की संगठन व्यवस्था भी अच्छी नहीं थी। देश के विभिन्न भागों में भड़कने वाले विद्रोहों में परस्पर कोई समन्वय नहीं था। प्रायः सिपाही अनियंत्रित रूप में व्यवहार करते थे। दूसरी ओर टेलीग्राफिक सिस्टम और डाक संचार ने अंग्रेजों को अपनी कारवाई की गति तेज करने में सहायता की। अंग्रेजों की सामुद्रिक दक्षता के फलस्वरूप उन्हें इंग्लैण्ड से सामरिक सहायता उन्हें आसानी से उपलब्ध थी और उन्होंने इस विद्रोह का बड़ी बेरहमी से दमन कर दिया गया।

7.5 विद्रोह की सार्थकता और प्रभाव

1857 के विद्रोह का प्रथम लक्षण था कि भारतीय अंग्रेजी शासन को समाप्त करना चाहते थे और इस लक्ष्य के लिए संगठित रूप से उनका मुकाबला करने के लिए खड़े होने के लिए भी तैयार थे। यद्यपि वे अपने उद्देश्य प्राप्त करने में असफल रहे परंतु वे भारतीयों के मन में राष्ट्रीयता के बीज बोने में सफल रहे। भारतीय लोग उन बहादुरों के लिए और भी जागरूक हो गए थे, जिन्होंने इस विद्रोह में अपने जीवन का बलिदान किया। तथापि, यहीं से हिन्दुओं और मुसलमानों में परस्पर अविश्वास की शुरुआत हुई, जिसका बाद में अंग्रेजों ने भारत में शासन जारी रखने के लिए शोषण किया।

7.6 विद्रोह की विरासत

1857 का विद्रोह इस दृष्टि से अद्वितीय है कि इसने जाति, समुदाय और वर्ग के बंधनों को समाप्त कर दिया। पहली बार भारत के लोगों ने एकजुट होकर अंग्रेजी शासन के लिए एक चुनौती खड़ी की। यद्यपि विद्रोहियों के प्रयासों को सफलता नहीं मिली फिर भी अंग्रेजी सरकार को भारत के प्रति अपनी नीतियों को बदलने के लिए बाध्य कर दिया। अगस्त 1858 में भारत में बेहतर सरकार अधिनियम के द्वारा बोर्ड ऑफ कंट्रोल और बोर्ड ऑफ डाइरेक्टरस को समाप्त कर दिया गया और भारत के लिए एक स्टेट सैक्रेटरी के पद का निर्माण किया गया जिसमें 15 सदस्यों की एक भारतीय परिषद को शामिल किया गया, ताकि वे भारत के वायसराय, वह पदनाम जिसे पहले भारत का गवर्नर जनरल कहा जाता था, की सहायता कर सकें। अगस्त 1858 में ब्रिटेन की साम्राज्ञी ने भारत का नियंत्रण ईस्ट इंडिया कंपनी से सीधे अपने हाथों में ले लिया और 1877 में रानी विक्टोरिया को भारत की साम्राज्ञी घोषित कर दिया गया। इसने भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन को समाप्त कर दिया। 1 नवंबर 1858 की उद्घोषण के द्वारा रानी ने यह घोषणा की कि कंपनी की नीतियों को जारी रखा जाएगा। भारत अंग्रेजी साम्राज्य का उपनिवेश बन गया। भारतीय शासकों को आश्वस्त किया गया कि गोद लेने के उपरांत उनके उत्तराधिकारी के अधिकार को मान्यता दी जाएगी। सम्राज्ञी ने वचन दिया कि कंपनी द्वारा भारत राज्य के शासकों के साथ की गई संधियों और करारनामों का मान रखा जाएगा।

अब तक अंग्रेजों को हिन्दु-मुस्लिम एकता पर पक्का अविश्वास हो गया था। उन्होंने देश में फूट डालों और राज करने की नीति को अपनाने का निर्णय किया। सिविल और सैनिक प्रशासन में केन्द्रीय पदों पर उन्होंने अपना सख्त नियंत्रण बनाये रखा। इस इरादे को अंजाम देने के लिए इंडियन सिविल सर्विस अधिनियम 1861 जारी किया गया जिसके द्वारा आकर्षक सिविल सेवा में चयन के लिए लंदन में हर वर्ष एक प्रतियोगी परीक्षा का आयोजन शुरू किया गया। इस विद्रोह ने एंग्लो-इंडियन इतिहास में केन्द्रीय भूमिका निभाई। अंग्रेज सावधान हो गए और अपने साम्राज्य के प्रति रक्षात्मक भूमिका में आ गए, जबकि भारतीयों के मन में कड़वाहट भरी रही कि वे अब कभी भी अपने शासकों पर भरोसा नहीं कर पायेंगे। यह विश्वास तब तक नहीं हो पाया जब तक कि 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (इंडियन नेशनल कांग्रेस) की स्थापना नहीं हो गई और महात्मा गांधी के साथ भारतीयों ने होम रूल के लिए पुनः गति हासिल नहीं कर ली। एक समूह जो इस मुसीबत और अंग्रेजों के विरोध से दूर रहा वह था अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त भारतीय लोगों का समूह। यह समूह अपनी उन्नति का श्रेय नए शासन की स्थितियों को देता था। इसके कुछ सदस्य बंगाली ज़मीदारों के नए समूह से थे, वह वर्ग जो बंगाल के स्थाई बंदोबस्त की पैदाइश था। यह जानना रोचक होगा कि इस कुलीन समूह के कुछ सदस्य 1857 के विद्रोह के करीब तीस या चालीस वर्ष बाद अंग्रेजों के खिलाफ हो गये थे। 1857 के संकट के लिए मुख्यतया सेना जिम्मेदार थी। अतः सेना में कुछ मूलभुत परिवर्तन शुरू किए गए। भारत में यूरोपियन ट्रूप्स के सैन्य बल में वृद्धि की गई और भारतीय ट्रूप्स की संख्या में 1857 से पूर्व की संख्या से भी ज्यादा कमी कर दी गई। कुछेक माऊंटेन बैट्रीज को छोड़कर सभी भारतीय तोपखाना यूनिटों (आर्टिलरी) यूनिटों को समाप्त कर दिया गया, यहाँ तक कि अंग्रेज सैनिकों के साथ आर्टिलरी को रखा गया। दूसरी ओर स्वदेशियों को जाति, धर्म और क्षेत्र के आधार पर स्वदेशियों से ही लड़वाने का प्रयास किया गया। सेना और तोपखाना विभागों (आर्टिलरी डिपार्टमेंट्स) में सभी बड़े पदों को यूरोपियनों के लिए आरक्षित कर दिया गया। भारतीयों और अंग्रेजों में परस्पर अविश्वास और डर व्याप्त था। बड़े समय से यह अनुभव किया जा रहा था कि 1857 के विद्रोह का मूल

कारण था शासक और शासित में परस्पर संपर्क का अभाव। इस प्रकार इंडियन कौंसिल्स एक्ट, 1861 के द्वारा भारत में प्रतिनिधत्व संस्थाओं के विकास का एक विनम्र प्रयास शुरू किया गया। विद्रोह के भावनात्मक उत्तरोत्तर प्रभाव शायद सबसे ज्यादा दुर्भाग्यपूर्ण थे। नसलीय कड़वाहट इस संघर्ष की शायद सबसे खराब विरासत रही थी।

पाठगत प्रश्न 7.2

1. औपनिवेशीय शासन के विरूद्ध भारतीय सैनिकों की दो शिकायतों उल्लेख करें।
2. 1857 के विद्रोह के तीन महत्वपूर्ण नेताओं के नाम लिखें।
3. ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन को कब और कैसे समाप्त किया गया?
4. 1857 के विद्रोह आंदोलन की विफलता के तीन प्रमुख कारणों की सूची बनाएँ।

आपने क्या सीखा

- भारत में अंग्रेजी शासन के विरूद्ध और नाराज़गी का मुख्य कारण थे लोगों का उनके द्वारा दमन और शोषण।
- खेतीहर किसानों और जनजातियों के लोगों को अपनी ही जमीन से बेदखल करने से वे अपनी ही जमीन पर मजदूर बन गए थे। विभिन्न प्रकार के करों ने उनके जीवन को दयनीय बना दिया था।
- जो लोग लघु कुटीर उद्योगों में लगे हुए थे उन्हें अंग्रेजों द्वारा उत्पादित सामान के आयात के परिणामस्वरूप अपने कारखाने बंद करने पड़े थे। इन सभी परिवर्तनों और अंग्रेजी प्रशासन के गैर-जिम्मेदार व्यवहार के कारण किसानों को अपनी शिकायतों की अभिव्यक्ति विद्रोह के द्वारा प्रदर्शित करने के लिए मजबूर होना पड़ा।
- दुर्भाग्यवश संगठित अंग्रेजी सशस्त्र बालों के समक्ष यह विद्रोह सफल नहीं हो पाए परंतु इन विद्रोहों ने भारत में ब्रिटिश राज के भविष्य को चुनौती देने की राह खोल दी थी।
- 1857 का विद्रोही आंदोलन अंग्रेजी सत्ता के सामने एक बड़ी चुनौती था। इसका नेतृत्व सैनिकों ने किया परंतु सामान्य लोगों ने भी इसका समर्थन किया।
- 1857 के विद्रोह के लिए आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक और सैनिक कारण उत्तरदायी थे - चर्बी लगे कारतूसों की घटना इसका तात्कालिक कारण बनी।
- भारत का एक बहुत बड़ा हिस्सा इससे प्रभावित हुआ। विद्रोह के मुख्य केन्द्र थे मेरठ, दिल्ली, कानपुर, लखनऊ, झांसी, बरेली और आरा। विद्रोह के कुछ मुख्य नेता थे - बख्त खान, नाना साहिव, तात्या टोपे, अजी मुल्लाह, बेगम हजरत महल, मौलवी अहमदुल्लाह, रानी लक्ष्मी बाई, खान बहादुर खान और कुवर सिंह।
- विद्रोह भारत से ब्रिटिश शासन को समाप्त करने में असफल रहा। असफलता के मुख्य कारण थे - इसका स्थानीय और असंगठित होना, कमजोर नेतृत्व तथा धन और हथियारों का अभाव।

पाठांत प्रश्न

1. किसानों तथा जनजातीय विद्रोहों के दो समान लक्षणों की व्याख्या करें।
2. किस प्रकार राजनीतिक और सामाजिक-धार्मिक कारक 1857 के विद्रोह का कारण बने?
3. 1857 के विद्रोह के महत्व की व्याख्या करें।
4. 1857 के विद्रोह के मुख्य नेताओं के नाम लिखिये और क्यों उन्होंने विद्रोह में भाग लिया की एक सारणी बनाए।
5. क्या आप सोचते हैं कि 1857 के विद्रोह ने अंग्रेजों और उनके भारत में शासन पर कोई प्रभाव डाला? स्थिति का विश्लेषण करते हुए अपनी प्रतिक्रिया दें।
6. इतिहास हमें बताता है कि सामान्य लोग तब विरोध करते हैं जब कि उनकी जीविका संकट में हो। क्या आप सोचते हैं कि यह कथन आज भी सार्थक है? किसी एक ऐसी ही घटना को पहचानिए जो हाल में घटी हो और किसी समाचार पत्र या पत्रिका में छपी हो तथा उस पर लगभग 50 शब्दों में एक रिपोर्ट बनाइए।
7. (a) दिए गए भारत के भौगोलिक मानचित्र पर निम्नलिखित विद्रोहों के क्षेत्रों को अंकित करें:
   (i) फकीर और सन्यासी विद्राह (ii) संथाल विद्रोह
   (iii) मुंडा विद्रोह (iv) जयतिया तथा गारो विद्रोह
   (b) प्रत्येक विद्रोह का एक कारण लिखें

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

7.1

2. शोषकों के तीन समूह थे।

   (क) अंग्रेजी सरकार के अफसर

   (ख) ज़मीदार

   (ग) ऋणदाता

3. लोकप्रिय विद्रोही आंदोलनों के निम्नलिखित चार कारण थे:

   (क) अंग्रेजों द्वारा शोषण

   (ख) किसानों पर लगाया जाने वाले ऊँची दर में लगान

   (ग) वाणिज्यिक/नकदी फसल उगाने की बाध्यता

   (घ) अंग्रेजों द्वारा लोगों के धार्मिक रीति-रिवाज़ों में हस्तक्षेप

7.2

1. (क) कम वेतन और कोई भत्ता नहीं, समुद्रपार ड्यूटी लगाय जाने के लिए कोई अतिरिक्त भुगतान नहीं।

   (ख) पदोन्नति, पेंशन और सेवा शर्तों में सामाजिक भेदभाव

2. रानी लक्ष्मी बाई, तात्या टोपे, बेगम हज़रत महल, नाना साहिब, आरा के कुंवर सिंह।

3. ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन का अंत 1858 में ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा रानी की एक उद्घोषण के द्वारा किया गया था।

4. 1857 के विद्रोह की विफलता के तीन मुख्य कारण थे।

   (क) यह विद्रोह भारत के इतिहास की एक बड़ी घटना थी। एक संगठित और शक्तिशाली शत्रु के समक्ष इसके सफल होने की बहुत कम संभावना थी।

   (ख) यह केवल उत्तर और मध्य भारत तक सीमित रहा।

   (ग) विद्रोहियों के उद्देश्य में एकरूपता नहीं थी।

   (घ) आंदोलन का नेतृत्व कमज़ोर था।

   (ङ) विद्रोहियों के पास शस्त्रों और धन की कमी थी।